नैनो – मैटीरियल आधारित संवेदक

मुहम्मद अयुब अंसारी[1] तथा रमेश कुमार प्रजापति[2]
[1]रीडर, रसायन विज्ञान विभाग
बिपिन बिहारी पी0 जी0 कॉलेज, झांसी(उ0 प्र0)–284001, भारत
ayub67@rediffmail.com
[2]वरिष्ठ प्रवक्ता, रसायन विज्ञान विभाग
दिगम्बर जैन पी0 जी0 कॉलेज, बड़ौत, बागपत(उ0 प्र0)–250611, भारत
rameshkrpr@yahoo.com

विगत तीन दशकों से संवेदक के क्षेत्र में अभूतपूर्व प्रगति हुई है। इनके निम्न गुणों जैसे कि इनका आसानी से प्रयोग, शीघ्रता से पता करना व कम लागत आदि के कारण संवेदक परम्परागत विश्लेषणात्मक तकनीकी से हटकर बहुत ही उपयोगी सिद्ध हो रहे हैं।

आधुनिक युग में अति सूक्ष्म प्रौद्योगिकी में महत्वपूर्ण प्रगति के कारण नैनो–मैटीरियल पर आधारित संवेदक का विश्लेषण करने में उपयोग हो रहा है। संवेदक ऐसा उपकरण है जो कि भौतिक गुणों की पहचान करते हुए उसका मापन करता है। संवेदक के व्यापक प्रभाव को पर्यावरण निगरानी, चिकित्सा, खाद्य सुरक्षा तथा मानव सुरक्षा में देखा जा सकता है। इसलिए ऐसे संवेदक के खोज एवं विकास की आवश्यकता महसूस हुई जिनका आयाम नैनोमीटर के पैमाने में हो सके क्योंकि जब पदार्थ का आयाम अतिसूक्ष्म होता है तो इनका पृष्ठ से आयतन अनुपात ज्यादा होता है। इस अनुपात के बढने से पदार्थ का पृष्ठगुण सम्पूर्ण पदार्थ से ज्यादा होता है।

संवेदक के कार्य प्रणाली को तीन प्रकार से विभाजित करके आसानी से समझा जा सकता है–

1. रिकग्निशन के सिद्धांत पर(जैसे कि इंजाइम, डी0एन0ए0 या मॉलिक्युलर रिकग्निशन)
2. ट्रांसड्यूजर विधि(इलेक्ट्रिकल, ऑप्टिकल, थर्मल आदि)
3. प्रयोग के आधार पर(पर्यावरण, अंतरिक्ष, खाद्य, औषधि आदि)

सामान्यत: रासायनिक या जैव संवेदक रिसेप्टर और ट्रांसड्यूजर से मिलकर बने हुए होते हैं। रासायनिक संवेदक में रिसेप्टर पॉलिमर धातु या ऑक्साइड या सेल्फ असेम्बल्ड मोनोलेयर जैसे पदार्थों से तथा जैविक संवेदक में रिसेप्टर एंटीबॉडी, इंजाइम, प्रोटीन या न्युक्लिक एसिड होते हैं। जब ये एनालाइट के सम्पर्क में आते हैं तो रासायनिक या भौतिक क्रिया करके सिग्नल देते हैं और ट्रांसड्यूजर इन सिग्नल को मापने का कार्य तथा मात्रा का निर्धारण करता है[1,2]।

सिग्नल को ट्रान्सड्यूस करने के लिए निम्न महत्वपूर्ण विधियों का प्रयोग करते है।

1. आप्टीकल मापन (ल्यूमिनिसेन्स, सर्फेस प्लाज्मा, रिजोनेन्स, ध्रुवीकरण, फ्लोरोसेन्स)
2. इलैक्ट्राकेमिकल मापन (कन्डक्टोमेट्रिक, एम्पीयरोमेट्रिक, पोटेन्षियोमेट्रिक आदि) ।
3. भार संवेदी मापन।
4. ताप–सूचक जैव संवेदक।

नैनो–मैटीरियल पर आधारित संवेदकों का मापन के दो वर्गों में प्रयोग करके उन्हें आसानी से समझा जा सकता है।

1. आयनिक अवयवों के मापन में–

   टॉन और उनके सहयोगियों[3] ने सर्वप्रथम नैनोकण पर आधारित ऑप्टिकल संवेदक का खोज एवं विकास किया। इसके उपरांत कई अन्य ऑप्टिकल रासायनिक संवेदकों का निर्माण किया गया जिसमें पीएच, आयन की सान्द्रता तथा अन्य गुणों का अध्ययन किया गया[4]।

   इस कार्य के लिए 100–1000nm व्यास वाला आप्टीकल फाइबर का प्रयोग किया गया। इसके ऊपर (200nm) एल्युमिनीयम जमा किया गया और पी0एच0 संवेंदी फ्लोरोसेन्स डाई के द्वारा 10^{-18} से लेकर 10^{-21} मोल तक एनालाइट की मात्रा का पता लगाया। कैल्सियम आयन के मापन में भी आप्टीकल नैनो जैव संदवेक का उपयोग किय गया है।

2. उदासीन अवयवों के मापन में–

   नैनोफाइबर का सर्वप्रथम उपयोग जैव–संवेदक के क्षेत्र में कैंसर जैसी घातक बीमारी के पता लगाने में किया गया। इस नैनो जैव संवेदक के द्वारा 10^{-21} मोल की सीमा तक फ्लोरोसेन्ट स्पेक्ट्रोस्कोपी द्वारा बेंजो(एल्फा)फाइरीन टेट्रॉल(बी0पी0टी0) का पता लगाया गया।

यह नैनो जैव संवेदक एन्टीबाडी/एन्टीजेन का उदाहरण है। इस प्रमाणी में नैनोफाइबर का प्रयोग चांदी के कोटिंग(200 नैनोमीटर) करके बनाया जाता है इसके द्वारा मापन का कार्य शीघ्र(5 मिनट) तथा आसानी से होता है। इस जैव संवेदक के विकास के उपरान्त अन्य लोगों ने भी इस तकनीकी का प्रयोग विभिन्न जैविक पदार्थ के मापन में किया गया। नाइट्रिक ऑक्साइड को पता लगाने में नैनो जैव संवेदक का प्रयोग किया गया है। इसमें फ्लोरोसेन्स के द्वारा साइट्रोक्रोम–सी0 के कनफर्मेशन में हुए बदलाव का मापन कर नाइट्रिक ऑक्साइड 1 माइक्रोमोल/लीटर की सीमा तक का पता लगाया गया तथा संवेदक का रिस्पान्स(एक सेकण्ड से भी कम समय में) बहुत ही तेज होता है। [5, 6]

संदर्भ

1. टर्नर, एन्थनी; विल्सन, जॉर्ज और कॉबे(1987) बायोसेंसर, पृ0 770।
2. कवाल्केन्टी, ए0 एवं अन्य(2008) सेंसर, खण्ड 8, अंक 5, मु0 पृ0 2932–2958।
3. टॉन, बी0; शी, जेड0 वाई तथा अन्य(1992) ऐनालिटिकल केमिस्ट्री, खण्ड 64, पृ0 2985।
4. बरकर, एस0 एल0 आर0 तथा अन्य(1998) , खण्ड 8, ऐनालिटिकल केमिस्ट्री, खण्ड 70, पृ0 971।
5. पालीसाइकिलीक एरो कम्पाउन्ड्स, खण्ड 8, 1996, पृ0 5।
6. एनालिटिकल कैमेस्ट्री, खण्ड 71, 1999, पृ0 1529।